Chap-7

अध्याय-सप्तम

प्रसाद काव्य में प्रतीक विधान

स्वरूप की दृष्टि से प्रतीक के भेद :

अमूर्त प्रस्तुत के लिए मूर्त प्रतीक

मूर्त प्रस्तुत के लिए मूर्त प्रतीक

अमूर्त प्रस्तुत के लिए अमूर्त प्रतीक

मूर्त प्रस्तुत के लिए अमूर्त प्रतीक

अन्य आधारों पर बिंब के भेद :

सार्वभौम प्रतीक

देशगत प्रतीक

परम्परागत प्रतीक

व्यक्तिगत प्रतीक या नवीन प्रतीक

युगीन प्रतीक

भावात्मक प्रतीक

प्रयोग की दृष्टि से प्रतीक के भेद :

व्यंजनागर्भ प्रतीक

लाक्षणिक प्रतीक

प्रतीयमान के आधार पर प्रतीक के भेद :

रूपात्मक प्रतीक

गुण-भाव-स्वभावात्मक प्रतीक

क्रियात्मक प्रतीक

मिश्र प्रतीक

रूपात्मक प्रतीक :

आकृतिमूलक प्रतीक

परिवेशमूलक प्रतीक

वर्णमूलक प्रतीक

:: प्रसाद काव्य में प्रतीक विधान ::

प्रसाद जी ने अपने काव्य में प्रतीकों का सुन्दर प्रयोग किया है। इनके प्रतीकों में विविधता अधिक है। इनके प्रतीक भावोत्कर्ष में पूर्णतया सहायक हुए हैं। कवि ने अपनी हृदयगत भावनाओं को अभिव्यक्त करने के लिए प्रतीकों का ही सहारा लिया है। प्रतीक विधान की दृष्टि से `आँसू` और `कामायनी` इनकी सफल रचनाएँ हैं। इनकी कतिपय रचनाओं- `झरना`, `आँसू`, `लहर` और `कामायनी` के शीर्षक प्रतीकात्मक ही हैं। `झरना` कवि के हृदय प्रवाह का `लहर` हृदय में उठने वाली भावनाओं का, `आँसू`, विरह विदग्ध जीवन का प्रतीक है। इसके अतिरिक्त `कामायनी` के पात्र जैसे मनु-मन का, इड़ा-बुद्धि का और श्रद्धा- हृदय का प्रतीक है। प्रसाद जी ने स्वयं ही `कामायनी` की भूमिका में स्वीकार किया है कि `मनु, श्रद्धा और इड़ा इत्यादि अपना ऐतिहासिक अस्तित्व रखते हुए, सांकेतिक अर्थ की भी अभिव्यक्ति करें तो मुझे कोई आपत्ति नहीं।`[1]

प्रसाद जी के प्रतीक विधान की दो विशेषताएँ हैं - पहला इन्होंने प्रतीकों का प्रयोग मन की उपदशाओं को अभिव्यक्त करने के लिए किया है। दूसरी हृदय के बाह्य स्थूल वर्णन की अपेक्षा आन्तरिक अन्तर्द्वन्द्वों के चित्रण के लिए प्रतीकों का सहारा लिया है। डॉ० कुमार विमल के मतानुसार - `कामायनीकार प्रसाद अन्तर्मुख सहजानुभूति के ही कवि हैं। क्योंकि इनके काव्य में हमें प्रतीकों की विशुद्धता मिलती है।`[2] डॉ० प्रेमशंकर लिखते हैं-` प्रतीक में मनोभावों का प्रवेश प्रसाद की प्रमुख विशेषता है। अत: उनके प्रतीक केवल बाह्य स्थूल वर्णन के लिए नहीं हैं वे अन्तरतम की मनोदशा पर प्रकाश डालते हैं।`[3]

इसके अतिरिक्त इन्होंने अधिकतर प्रतीक प्रकृति से ही ग्रहण किए हैं। 'आँसू' और 'लहर' प्राकृतिक प्रतीकों से ओतप्रोत हैं।

प्रसाद जी ने केवल कविताओं में ही प्रतीकों का प्रयोग नहीं किया अपितु नाटकों और कहानियों में भी इसके सुन्दर प्रयोग किए हैं। आकाशदीप, आँधी, ग्रामगीत आदि कहानियाँ इसके सुन्दर उदाहरण हैं। नाटकों में 'ध्रुवस्वामिनी' को लिया जा सकता है।

स्वरूप की दृष्टि से प्रतीकों को चार भागों में बाँटा जा सकता है -

(१) अमूर्त प्रस्तुत के लिए मूर्त प्रतीक
(२) मूर्त प्रस्तुत के लिए मूर्त प्रतीक
(३) अमूर्त प्रस्तुत के लिए अमूर्त प्रतीक
(४) मूर्त प्रस्तुत के लिए अमूर्त प्रतीक

(१) अमूर्त प्रस्तुत के लिए मूर्त प्रतीक :

प्रसाद काव्य में इस प्रकार के प्रतीकों की भरमार है। इसके उदाहरण इस प्रकार से हैं -

विकसित सरसिज- वन वैभव
मधु-उषा के अंचल में
उपहास करावे अपना
जो हँसी देख ले पल में।[४]

इस उदाहरण में 'मधु उषा' आशा और वैभव का प्रतीक है जिसके

कारण जीवन में सहज उत्साह और उल्लास छा जाता है ।

क्यों व्यथित व्योम- गंगा सी
छिटका कर दोनों छोरें
चेतना - तरंगिनि मेरी
लेती है मृदुल हिलोरें ।[५]

यहाँ कवि वियोगी व्यक्ति की चेतना के हिलोरे लेने अथवा बेहोशी की सी हालत हो जाने का वर्णन करता है । यहाँ `आकाश गंगा ` से चेतना जैसी अमूर्त वस्तु का बोध होता है ।

उठ उठ री लघु लघु लोल लहर !
करुणा की नव अँगराई - सी,
मलयानिल की परछाईं - सी,
इस सूखे तट पर छिटक छहर ।[६]

इस उदाहरण में प्रसाद जी ने `लहर` के द्वारा हृदय की भावनाओं का और `सूखे तट` के द्वारा शुष्क जीवन की ओर इंगित किया है ।

सूने नभ में आग जलाकर
यह सुवर्ण- सा हृदय गलाकर
जीवन- संध्या को नहला कर
रिक्त जलधि भरने वाले को ?[७]

यहाँ `नभ` और `जलधि` हृदय का, `संध्या` निराशा का प्रतीक है ।

वसुधा नीचे ऊपर नभ हो,
नीड़ अलग सबसे हो,
झाड़खंड के चिर पतझड़ में
भागो सूखे तिनको ।[८]

यहाँ पर 'पतझड़' का प्रयोग दुखी जीवन के प्रतीक के रूप में हुआ है । इसी प्रकार के उदाहरण 'आँसू' और 'कामायनी' में मिलते हैं ।

तुमने इस सूखे पतझड़ में
भर दी हरियाली कितनी,
मैंने समझा मादकता है
तृप्ति बन गयी वह इतनी ।[९]

यहाँ भी 'पतझड़' के द्वारा नीरसतापूर्ण जीवन और 'हरियाली' से उल्लास से भरपूर जीवन का बोध होता है ।

पतझड़ था, झाड़ खड़े थे
सूखी सी फुलवारी में
किसलय नव कुसुम बिछाकर
आये तुम इस क्यारी में ।[१०]

प्रसाद जी ने अपने काव्य में 'गोधूली' का भी वर्णन किया है -

शशि- मुख पर घूँघट डाले
अंचल में दीप छिपाये
जीवन की गोधूली में
कौतूहल से तुम आये ।[११]

'गोधूली' के द्वारा जीवन की घोर निराशामयी स्थिति का वर्णन किया है।

झंझा झकोर गर्जन था
बिजली थी, नीरद माला।
पाकर इस शून्य हृदय को
सबने आ डेरा डाला।[१२]

इस उदाहरण में झंझा, गर्जन, बिजली और नीरदमाला के द्वारा मानव हृदय की भावनाओं जैसे - आह, कसक, तड़प इत्यादि की प्रतीति होती है।

सब रंगों में फिर रही हैं बिजलियाँ,
नील नीरद! क्या न बरसोगे कभी!
एक झोंका और मलयानिल अहा!
क्षुद्र कलिका है खिली जाती अभी।[१३]

'बिजलियाँ' उत्तेजनाओं की, 'नील नीरद' प्रियतम की, 'कलिका' हृदय की प्रतीक है।

श्रद्धा देख रही चुप मनु के
भीतर उठती आँधी को।[१४]

'आँधी' के द्वारा मनु के मन में उठने वाले तरह- तरह के विचारों की प्रतीति होती है।

जीवन की जटिल समस्या
है बढ़ी जटा सी कैसी
उड़ती है धूल हृदय में
किसकी विभूति है ऐसी ?[१५]

'उड़ती धूल' से विरह वेदना के कारण प्रेमी के हृदय में जो आहों की घटा सी घुमड़ा करती है अर्थात भाप के गुब्बारे जैसे उठा करते हैं, उनकी प्रतीति होती है।

कौन थामता है पतवार ऐसे अंधड़ में
अंधकार-पारावार गहन नियति- सा-
उमड़ रहा है ज्योति-रेखा-हीन क्षुब्ध हो।[१६]

'अन्धकार' से निराशा और 'ज्योति' के द्वारा आशा का ज्ञान होता है।

जल उठा स्नेह, दीपक सा,
नवनीत हृदय था मेरा
अब शेष धूम- रेखा से
चित्रित कर रहा अंधेरा।[१७]

'धूम रेखा' विरह दशा का प्रतीक है।

जवा-कुसुम सी उषा खिलेगी
मेरी लघु प्राची में,
हँसी भरे उस अरुण अधर का
राग रंगेगा दिन को।[१८]

'उषा' आशा और प्रेम का प्रतीक है।

आह शून्यते। चुप होने में
तू क्यों इतनी चतुर हुई?
इन्द्रजाल-जननी। रजनी तू
क्यों अब इतनी मधुर हुई।[१९]

यहाँ `शून्यता` से रजनी का ज्ञान होता है ।

रजत कुसुम के नव पराग- सी
उड़ा न दे तू इतनी धूल,
इस ज्योत्स्ना की, अरी बावली
तू इसमें जावेगी भूल ।[२०]

`रजत -कुसुम` के द्वारा रजनी की समृद्धि का बोध होता है ।

(२) मूर्त प्रस्तुत के लिए मूर्त प्रतीक :

प्रसाद काव्य में इस प्रकार के प्रतीकों का भी व्यवहार हुआ है ।

बाँधा था विधु को किसने
इन काली जंजीरों से
मणि वाले फणियों का मुख
क्यों मरा हुआ हीरों से ?[२१]

यहाँ कवि ने नायिका के मुख एवं केश राशि के सौन्दर्य का वर्णन किया है । यहाँ `विधु` नायिका के मुख का, `काली जंजीर` उसकी काली- काली घुँघराली लटों की, `फणि` से उसके काले घने केशों का बोध होता है ।

जहाँ तामरस इन्दीवर या सित शतदल हैं मुरझाये-
अपने नालों पर, वह सरसी श्रद्धा थी, न मधुप आये ।[२२]

`तामरस` से कामिनी के लालिमा से युक्त अंगों का `शतदल` उसके मुख का और `नालों` से उसकी पतली ग्रीवा का और `इन्दीवर` से उसकी नीलकमल सी आँखों की प्रतीति होती है ।

पर हाय ! चन्द्र को घन ने क्यों है घेरा
उज्ज्वल प्रकाश के पास अजीब अंधेरा
उस रस-सरवर में क्यों चिन्ता की लहरी
चंचल चलती है भाव- भरी है गहरी ।[२३]

`चन्द्र` मुख का और `घन` काले बालों का प्रतीक है ।

विद्रुम सीपी सम्पुट में
मोती के दाने कैसे ?
है हंस न, शुक यह, फिर क्यों
चुगने को मुक्ता ऐसे ?[२४]

कवि ने लाल-लाल होठों तथा मोती जैसे चमकते हुए दाँतों के सौंदर्य का निरूपण किया है ।`विद्रुम सीपी` से लाल- लाल होठों,`मोती के दानों` से दाँतों का और `शुक` से नासिका का अंकन किया गया है ।

मुख -कमल समीप सजे थे
दो किसलय से पुरइन के
जल बिन्दु सदृश ठहरे कब
उन कानों में दुख किनके ?[२५]

`कमल` से मुख का और `दो किसलय से पुरइन` से नायिका के कानों का ज्ञान होता है ।

किसके अन्तःकरण अजिर में,
अखिल व्योम का लेकर मोती ।[२६]

`मोती` से आँसुओं का द्योतन होता है ।

देख नयनों ने एक पलक, वह छवि की छटा निराली थी ।
मधु पीकर मधुप रहे सोये कमलों में कुछ-कुछ लाली थी । [२७]

`मधुप` और `कमल` से लालिमा से युक्त आँखों का और बरौनी का बोध होता है ।

मधुप गुनगुना कर कह जाता कौन कहानी यह अपनी,
मुरझाकर गिर रहीं पत्तियाँ देखो कितनी आज घनी । [२८]

यहाँ पर `मधुप` शब्द प्रेमी के लिए प्रयुक्त हुआ है ।

वह लाज भरी कलियाँ अनंत,
परिमल- घूंघट ढंक रहा दंत,
कंप- कंप चुप- चुप कर रही बात । [२९]

`कलियाँ` से नायिकाओं का बोध होता है ।

वसुधा मदमाती हुई उधर आकाश लगा देखो झुकने । [३०]

`वसुधा` से नारी की और `आकाश` से नर की प्रतीति होती है ।

इस हृदय- कमल का घिरना
अलि- अलकों की उलझन में
आँसू -मरन्द का गिरना
मिलना निश्वास- पवन में । [३१]

इस उदाहरण में `कमल` से हृदय का और `भ्रमर` से अलकों का बोध होता है ।

(३) अमूर्त प्रस्तुत के लिए अमूर्त प्रतीक :

प्रसाद जी ने अपनी काव्य रचनाओं में अमूर्त प्रस्तुत के लिए अमूर्त प्रतीकों का भी प्रयोग किया है।

`पिंगल किरणों- सी मधु- लेखा,
हिम- शैल बालिका को तूने कब देखा।
कलरव संगीत सुनाती,
किस अतीत युग की गाथा गाती आती।[३२]

`अतीत युग की गाथा` अतीत की स्मृतियों का प्रतीक है।

बंशी को बस बज जाने दो,
मीठी मीड़ों को आने दो,
आँख बन्द करके गाने दो,
जो कुछ हमको आता है।[३३]

`मीठी मीड़` से अतीतकालीन स्मृतियों का बोध होता है।

गौरव था, नीचे आये
प्रियतम मिलने को मेरे
मैं इठला उठा अकिंचन,
देखे ज्यों स्वप्न सवेरे।[३४]

इस उदाहरण में अमूर्त भाव `अकिंचन` हृदय की प्रसन्नता को व्यक्त करने के लिए अमूर्त प्रतीक का सहारा लिया है।

घिर जाती प्रलय घटायें
कुटिया पर आकर मेरी
तम-चूर्ण बरस जाता था
छा जाती अधिक अंधेरी।[३५]

`प्रलय घटा` से हृदय की उथल-पुथल और 'तम चूर्ण' से नैराश्य का बोध होता है।

`मलयानिल` का भी प्रसाद जी ने अपने काव्य में बार- बार वर्णन किया है। मलय गिरि भारत के दक्षिण भाग में एक पर्वत की श्रृंखला है वहाँ से चलनेवाली शीतल, मंद और सुगंध युक्त पवन को मलयानिल कहते हैं। इसके द्वारा मधुर- मधुर स्मृतियों का अंकन किया है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं -

सिहर भरी कंपती आवेंगी
मलयानिल की लहरें,
चुंबन लेकर और जगाकर -
मानस नयन नलिन को।[३६]

`मलयानिल की लहरें` प्रेयसी से सम्बंधित मधुर स्मृतियों का प्रतीक है।

छिप गईं कहा छूकर वे
मलयज की मृदुल हिलोरें
क्यों घूम गईं हैं आकर
करुणा- कटाक्ष की कोरें।[३७]

प्रिय की मधुर एवं सुकुमार स्पर्श की प्रतीति होती है। `झरना` में भी इस प्रकार के उदाहरण दिखायी देते हैं -

मलयानिल की तरह कभी आ, गले लगोगे तुम मेरे।
फिर विकसेगी उजड़ी क्यारी, क्या गुलाब की यह मेरे।।[३८]

इस प्रकार का उदाहरण `अजातशत्रु` में भी मिलता है -

चल वसन्त बाला अंचल से किस घातक सौरभ में मस्त,
आती मलयानिल ही लहरें, जब दिनकर होता है अस्त ।[३९]

इसके अतिरिक्त प्रसाद जी ने 'सुरभि' का भी वर्णन किया है -

मन-मयूर कब नाच उठेगा कादंबिनी छटा लखकर;
शीतल आलिंगन करने को सुरभि लहरियाँ आवेंगी ?[४०]

'सुरभि लहरियों' से भविष्य की सुखद अनुभूतियों का ज्ञान होता है ।

करुण रागिनी तड़प उठेगी
सुना न ऐसी पुकार कोकिल ।[४१]

'रागिनी' मादक अनुभूतियों का प्रतीक है ।

(४) मूर्त प्रस्तुत के लिए अमूर्त प्रतीक :

प्रसाद जी ने इस प्रकार के प्रतीकों की योजना भी की है । कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं -

जब लीला से तुम सीख रहे
कोरक कोने में लुक रहना
तब शिथिल सुरभि से धरणी में
बिछलन हुई थी ? सच कहना ।[४२]

इस उदाहरण में 'शिथिल सुरभि' से हृदय की मादकता तथा शीतलता प्रदान करनेवाली काम भावनाओं का और 'धरणी' से हृदय का भान होता है ।

क्या कहूँ, क्या कहूँ मैं उद्भ्रान्त ?
विवर में नील गगन के आज ।
वायु की भटकी एक तरंग,
शून्यता का उजड़ा-सा राज ।[४३]

यहाँ पर प्रसाद जी ने नील गगन के विशाल अवकाश में भटकी हुई वायु की एक तरंग का वर्णन किया है । जिससे मनु की दयनीय दशा का बोध होता है ।

अन्य आधारों पर भी प्रतीक का एक वर्गीकरण प्रस्तुत किया जा सकता है । जैसे -

(१) सार्वभौम प्रतीक
(२) देशगत प्रतीक
(३) परम्परागत प्रतीक
(४) व्यक्तिगत प्रतीक या नवीन प्रतीक
(५) युगीन प्रतीक
(६) भावात्मक प्रतीक

(१) सार्वभौम प्रतीक :

कुछ प्रतीक ऐसे भी होते हैं जिनके प्रति सब देशों व युगों की मान्यता एक जैसी होती है । इस प्रकार के प्रतीकों को सार्वभौम प्रतीक कहते हैं । उदाहरण के रूप में `फूल` और `काँटे` को ले सकते हैं । `फूल` उल्लास का और `काँटा` दुख, विषाद या पीड़ा का प्रतीक है । प्रसाद जी ने अपने काव्य में `फूल` और `काँटे` के उदाहरण के द्वारा इसी प्रकार की मान्यता व्यक्त की है ।

ली चला आज मैं छोड़ यहीं
संचित संवेदन -भार-पुंज,
मुझको काँटे ही मिले धन्य ।
हो सफल तुम्हें ही कुसुम-कुंज । ४४

यहाँ पर 'काँटे' से दुःख का और जीवन में आने वाली विभिन्न प्रकार की बाधाओं का, 'कुसुम' से सुख का बोध होता है ।

खिले फूल सब गिरा दिया है
न अब बसन्ती बहार कोकिल । ४५

'खिले फूल' से अतीत काल की सुखद एवं उल्लासपूर्ण स्थिति का ज्ञान होता है ।

हम हों सुमन की सेज पर या कंटकों की आड़ में
पर प्राणधन । तुम छिपे रहना, इस हृदय की आड़ में । ४६

इस उदाहरण में भी 'सुमन' सुख का और 'कंटक' दुःख का प्रतीक है ।

(२) देशगत प्रतीक :

प्रत्येक देश की राष्ट्रीयता के साथ उसके फूल, वृक्ष, ध्वज इत्यादि जुड़े होते हैं तथा कुछ निश्चित मान्यताओं के प्रतिनिधि होते हैं । उदाहरण के लिए हमारे देश में कबूतर शान्ति का प्रतीक है । कल्पवृक्ष, कामधेनु और गंगा इत्यादि से सम्बंधित प्रतीक इसी श्रेणी में आते हैं । कल्पवृक्ष एक कल्पित वृक्ष है जो कवि प्रसिद्धि के अनुसार स्वर्ग में होता है । उस कल्पनाजन्य देवोपम वृक्ष का पुष्प पराग कपोलों की अतिशय कोमलता और कान्ति को व्यंजित करता है ।

कल कपोल था जहाँ बिछलता
कल्पवृक्ष का पीत पराग ।[47]

(३) परम्परागत प्रतीक :

जो प्रतीक साहित्यिक परंपरा से प्राप्त होते हैं उन्हें परम्परागत प्रतीक कहते हैं। इस प्रकार के प्रतीकों को आसानी से समझा जा सकता है। प्रसाद जी ने अपने काव्य में इस प्रकार के प्रतीकों का प्रयोग किया है। `कामायनी` इसका सुन्दर उदाहरण है। डॉ० केदारनाथ सिंह के शब्दों में -`प्रसाद जी ने `कामायनी` में अधिकांशत: प्रचलित प्रतीकों का ही प्रयोग किया है। `कामायनी` में परम्परागत प्रतीकों का विशेषत: पौराणिक प्रतीकों का, अतिरमणीय और उदात्त प्रयोग मिलता है।`[48] प्रसाद जी के परम्परागत प्रतीक इस प्रकार से हैं -

नायिका के शरीर के अंगों का अंकन करने के लिए `कमल` का प्रयोग परंपरागत है -

जहाँ तामरस इन्दीवर या सित शतदल हैं मुरझाये-
अपने नालों पर, वह सरसी श्रद्धा थी, न मधुप आये।[49]

`तामरस` के द्वारा श्रद्धा के लालिमा से युक्त अंगों का और `इंदीवर` श्याम रंग नयनों का `सित शतदल` के द्वारा उसके मुख का और नालों के द्वारा उसकी पतली लंबी ग्रीवा का ज्ञान होता है।

इसी प्रकार एक अन्य उदाहरण में `कमल` हृदय का, `अलि` अलकों का प्रतीक है। हृदय के आँसू `कमल` के मकरन्द हैं जो आँखों से झरकर गिर रहे हैं।

इस हृदय-कमल का घिरना
अलि- अलकों की उलझन में
आँसू-मरन्द का गिरना
मिलना निश्वास- पवन में।[50]

आँखों के लिए `सीपी` का प्रयोग भी परंपरागत है -

इस छोटी सी सीपी में
रत्नाकर खेल रहा हो
करुणा की इन बूँदों में
आनन्द उडेल रहा हो ।[५१]

कामवासना के लिए `अग्निशिखा` का प्रतीक रूप में प्रयोग भी इसी श्रेणी में आता है ।

दो काठों की सन्धि बीच उस
निभृत गुफा में अपने,
अग्नि-शिखा बुझ गई, जागने
पर जैसे सुख सपने ।[५२]

`चकोर` के द्वारा निस्वार्थ प्रेमभाव का उद्घाटन हुआ है -

चित चैन चाहत है, चाह में भरी है चेति
चेतु चहु नेक तो चकोरी की निहारिये ।[५३]

`शलभ` के द्वारा एकनिष्ठ प्रेमी की प्रतीति होती है -

बुझ न जाय वह साँझ-किरन-सी दीप-शिखा इस कुटिया की,
शलभ समीप नहीं तो अच्छा, सुखी अकेले जले यहाँ ।[५४]

`अनन्त` या `आकाश` हृदय का परंपरागत प्रतीक है -

चिन्ता करता हूँ मैं जितनी
उस अतीत की, उस सुख की,
उतनी ही अनन्त में बनती
जाती रेखायें दुख की ।[५५]

मुख के लिए 'चन्द्रमा' का प्रयोग भी परम्परागत है -

तिरती थी तिमिर उदधि में
नाविक ! यह मेरी तरणी
मुख चन्द्र किरण से खिंच कर
आती समीप हो धरणी ।[५६]

+ + +

थक जाती थी सुख रजनी
मुख - चन्द्र हृदय में होता
श्रम - सीकर सदृश नखत से
अम्बर पट भींगा होता ।[५७]

इसी प्रकार से प्रसाद जी ने 'चातक' और 'कोयल की करूणा कातर वाणी का प्रयोग विरही या विरहिणी के विरह दग्ध हृदय की पुकार के लिए किया है जो कि परम्परागत प्रयोग है -

चातक की चकित पुकारें
श्यामा -ध्वनि सरल रसीली
मेरी करूणाएँ - कथा की
उलझी आँसू से गीली ।[५८]

+ + +

आज इस यौवन के माधवी कुंज में कोकिल बोल रहा,
मधु-पीकर पागल हुआ, करता प्रेम- प्रलाप,
शिथिल हुआ जाता हृदय, जैसे अपने आप ।
लाज के बन्धन खोल रहा ।[५९]

(४) व्यक्तिगत प्रतीक या नवीन प्रतीक :

इस प्रकार के प्रतीकों में कवि प्राचीन परम्परागत मान्यताओं को त्याग देता है और स्वतंत्र रूप से अप्रस्तुत अर्थ के भाव संवेदन के लिए वैयक्तिक अर्थ में प्रस्तुत को ग्रहण करता है। प्रसाद जी ने अपने काव्य में व्यक्तिगत प्रतीकों का भी प्रयोग किया है। इसके द्वारा उन्होंने अपनी व्यक्तिगत भावनाओं को अभिव्यक्त किया है। इस दृष्टि से अधिकांश प्रतीक प्रकृति से ही ग्रहण किए गए हैं। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं --

प्रकृति के यौवन का शृंगार
करेंगे कभी न बासी फूल ;
मिलेंगे वे जाकर अति शीघ्र
आह उत्सुक हैं उनकी धूल ।[६०]

'बासी फूल' पुरानी परम्पराओं और मान्यताओं का प्रतीक है।

घिर जाती प्रलय घटायें
कुटिया पर आकर मेरी
तम-चूर्ण बरस जाता था
छा जाती अधिक अंधेरी ।[६१]

'प्रलय घटायें' उदासी का, 'कुटिया' हृदय का और 'अंधेरी' निराशा का प्रतीक है।

मलयानिल की तरह कभी आ, गले लगोगे तुम मेरे ।
फिर बिकसेगी उजड़ी क्यारी, क्या गुलाब की यह मेरे ।।[६२]

'उजड़ी क्यारी' शुष्क जीवन का और 'गुलाब' हृदय का प्रतीक है।

छिप गईं कहां छूकर वे
मलयज की मृदुल हिलोरें ।[६३]

`मलयज की मृदुल हिलोरें ` सुख के दिनों का प्रतीक है जो एक नया प्रयोग है ।

झंझा झकोर गर्जन था
बिजली थी, नीरद माला
पाकर इस शून्य हृदय को
सबने आ डेरा डाला ।[६४]

`झंझा झकोर` से अन्तर्जगत् की तीव्रता का, `बिजली` से हृदय में बार- बार उठने वाली पीड़ा का, `नीरदमाला` से उदासी का बोध होता है ।

तिर रही अतृप्ति जलधि में
नीलम की नाव निराली
काला - पानी वेला सी
है अंजन रेखा काली ।[६५]

इस उदाहरण में कवि ने नायिका की काजल से सुशोभित आँखों के सौंदर्य का वर्णन किया है ।`नीलम की नाव` आँख की पुतली का प्रतीक है ।

(५) युगीन प्रतीक :

प्रसाद जी छायावाद युग के कवि हैं । इन्होंने अपने युग (छायावाद) की कोमल भावना के अनुरूप प्रतीकों का प्रयोग किया है । वीणा, सीपी और कली आदि के प्रतीक इसी कोटि में आते हैं ।

सुमन, तुम कली बने रह जाओ,
ये भौंरे केवल रस- लोभी इन्हें न पास बुलाओ ।[६६]

+ + + +

कलियाँ कुसुम की थी लजाई प्रथम-स्पर्श शरीर से
चिटकीं बहुत जब छेड़छाड़ हुआ समीर अधीर से ।[६७]

इस उदाहरण में 'कली-प्रेमिका' का प्रतीक है ।

मेरे क्रन्दन में बजती
क्या वीणा ? जो सुनते हो ।[६८]

\+ + +

चढ़ गई और भी ऊँची
रूठी करुणा की वीणा
दीनता दर्प बन बैठी
साहस से कहती पीड़ा ।[६९]

इसी प्रकार 'वीणा' हृदय का प्रतीक है ।

(६) भावात्मक प्रतीक :

भावना से आनीत और भावना को समीरित करने वाले प्रतीकों को भावात्मक ~~करने-वाले~~ प्रतीक कहते हैं । पतझड़, फुलवारी, नवकुसुम, क्यारी इत्यादि के प्रतीक इसी प्रकार के प्रतीक हैं । प्रसाद जी के काव्य में भावात्मक प्रतीकों के भी उदाहरण मिलते हैं -

पतझड़ था, झाड़ खड़े थे
सूखी सी फुलवारी में
किसलय नव-कुसुम बिछाकर
आये तुम इस क्यारी में ।[७०]

इस उदाहरण में 'पतझड़' उदासी का, 'फुलवारी' शरीर का, 'नवकुसुम' सरसता एवं प्रफुल्लता का और 'क्यारी' जीवन का प्रतीक है ।

वसुधा नीचे ऊपर नभ हो,
नीड़ अलग सबसे हो,
झाड़खंड के चिर पतझड़ में
भागो सूखे तिनको ।[७१]

इस उदाहरण में 'पतझड़' का प्रयोग दुःखी जीवन के प्रतीक रूप में किया गया है ।

प्रयोग की दृष्टि से प्रतीक को दो वर्गों में बाँटा जा सकता है —

(१) व्यंजनागर्भ प्रतीक
(२) लाक्षणिक प्रतीक

(१) व्यंजनागर्भ प्रतीक :

इस प्रकार के प्रतीक अपने सामान्य गुण अथवा धर्म का तिरस्कार करके किसी परोक्ष सत्ता अथवा रहस्य सत्ता की ओर संकेत करते हैं । डॉ० नामवरसिंह के विचार से 'जहाँ कोई वस्तु अपने सामान्य उपलक्षण का तिरस्कार करके अथवा उससे आगे बढ़कर अपने से असम्बद्ध प्रतीत होती हुई किसी अन्य वस्तु की ओर संकेत करती है, वहाँ पर व्यंजनागर्भ प्रतीक समझना चाहिए ।'[७२] प्रसाद काव्य में व्यंजनागर्भ प्रतीकों की छटा देखते ही बनती है । कुछ उदाहरण देखिए -

तुम कनक किरण के अन्तराल में
लुक-छिपकर चलते हो क्यों ?[७३]

इतना ही नहीं उन्होंने शृंगार के वर्णन के लिए भी इसी प्रकार के प्रतीकों का सहारा लिया है -

हिलते द्रुम- दल कल किसलय
देती गलबाँही डाली
फूलों का चुम्बन, छिड़ती -
मधुपों की तान निराली ।[७४]

इस उदाहरण में यौवन और मिलन का चित्र प्रस्तुत करने के लिए व्यंजनागर्भ प्रतीक का ही सहारा लिया है ।

'आँसू' की निम्न पंक्तियों में भी व्यंजनागर्भ प्रतीक है -

ये सब स्फुलिंग है मेरी
इस ज्वालामयी जलन के
कुछ शेष चिन्ह हैं केवल
मेरे उस महा मिलन के ।[७५]

(२) लाक्षणिक प्रतीक :

जो प्रतीक सादृश्य, साधर्म्य अथवा प्रतीयमान विरोध की अपेक्षा प्रभाव-साम्य को अधिक उभारते हैं वह लाक्षणिक प्रतीक कहलाते हैं । व्यंजनागर्भ प्रतीक के साथ-साथ प्रसाद जी ने इन लाक्षणिक प्रतीकों का भी प्रचुर प्रयोग किया है । उदाहरण इस प्रकार से है -

इस करूणा कलित हृदय में
अब विकल रागिनी बजती
क्यों हाहाकार स्वरों में
वेदना असीम गरजती ?[७६]

उपरोक्त उदाहरण में 'रागिनी' से व्यथा के स्वर की प्रतीति होती है ।

किंजल्क जाल हैं बिखरे
उड़ता पराग है रूखा ।[७७]

इस उदाहरण में 'किंजल्क जाल' अश्रु कणों और 'पराग' निश्वासों का प्रतीक है । ये सभी उदाहरण अपनी लाक्षणिकता में अद्वितीय हैं ।

प्रतीयमान के आधार पर भी प्रतीक का वर्गीकरण प्रस्तुत किया जा सकता है —

(१) रूपात्मक प्रतीक
(२) गुण-भाव-स्वभावात्मक प्रतीक
(३) क्रियात्मक प्रतीक
(४) मिश्र प्रतीक

(१) रूपात्मक प्रतीक :

रूप का सम्बंध चक्षुओं से होता है । जिस शब्द से ऐसे अर्थ का बोध हो जो किसी पदार्थ या वस्तु का द्योतक होता है तो वह रूपात्मक प्रतीक कहलाता है । रूपात्मक प्रतीक को तीन वर्गों में बाँटा जा सकता है -

(१) आकृतिमूलक प्रतीक
(२) परिवेश मूलक प्रतीक
(३) वर्णमूलक प्रतीक
(४) आकृतिमूलक प्रतीक

वह शब्द या पद जो किसी आकृति या नियत रूप को प्रस्तुत करता है उसे आकृतिमूलक प्रतीक कहते हैं । इसके उदाहरण देखिए -

चाँदनी सदृश खुल जाय कहीं
अवगुंठन आज सँवरता - सा ;
जिसमें अनन्त कल्लोल - भरा
लहरों में मस्त विचरता - सा

अपना फेनिल फन पटक रहा
मणियों का जाल लुटाता सा
उन्निद्र दिखाई देता हो
उन्मत्त हुआ कुछ गाता- सा ।[७८]

इस उदाहरण में 'फेनिल फन' से फेन उगलते हुए शेष नाग की आकृति प्रस्तुत हो जाती है ।

(२) परिवेशमूलक प्रतीक :

जो प्रतीक अपने परिवेश में एक दृश्य को समाहित किये रहते हैं उन्हें परिवेशमूलक प्रतीक कहते हैं । इसका उदाहरण देखिए -

डाली में कंटक संग कुसुम खिलते मिलते ही हैं नवीन
अपनी रूचि से तुम बिंधे हुए जिसको चाहे ले रहे बीन ।[७९]

इस उदाहरण में तीन प्रतीक हैं - डाली, कंटक और कुसुम । 'डाली' जीवन का, 'कंटक' दुःख का और 'कुसुम' सुख का प्रतीक है । इनमें 'डाली' परिवेशमूलक प्रतीक है । परन्तु अन्य दो आकृतिमूलक प्रतीक हैं । उदाहरण से गुलाब की डाली में काँटों और पुष्पों के साथ लगे हुए पत्तों का परिवेश भी प्रस्तुत हो जाता है ।

(३) वर्णमूलक प्रतीक :

अन्य दो भेदों के समान वर्णमूलक प्रतीक भी चाक्षुष ही होते हैं ।परन्तु इनमें आकृति का उतना महत्व नहीं होता जितना कि रंग या वर्ण का होता है । इस प्रकार के उदाहरण देखिए -

कामायनी-कुसुम वसुधा पर पड़ी, न वह मकरन्द रहा,
एक चित्र बस रेखाओं का, अब उसमें है रंग कहाँ ।

+ + +

वह जलधर जिसमें चपला या श्यामलता का नाम नहीं,
शिशिर-कला की क्षीण स्रोत वह जो हिमतल में जम जाये ।[८०]

इस उदाहरण में 'जलधर' से केश 'श्यामलता' और 'चपला' से गौर कान्ति का बोध होता है । यह दोनों वर्ण प्रतीक हैं ।

और देखा वह सुन्दर दृश्य
नयन का इंद्रजाल अभिराम
कुसुम- वैभव में लता समान
चन्द्रिका से लिपटा घनश्याम ।[८१]

इस उपरोक्त उदाहरण में भी वर्ण प्रतीक ही है । 'चन्द्रमुख' और 'घनश्याम' से गौरमुख और सघन कृष्ण-केशपाश का बोध होता है ।

(२) गुण-भाव-स्वभावात्मक प्रतीक :

इस प्रकार के प्रतीकों में गुण या भाव अवश्य ही रहता है और वही जगत के उस अवयव या अंग का स्वभाव माना जाता है । इस प्रकार के प्रतीकों की सुन्दर छटा प्रसाद जी के काव्य में देखते ही बनती है -

विश्व में जो सरल सुन्दर हो विभूति महान,
सभी मेरी हैं, सभी करती रहें प्रतिदान ।
यही तो, मैं ज्वलितवाडव-वह्नि नित्य-अशांत,
सिन्धु लहरों सा करे शीतल मुझे सब शांत ।[८२]

उपरोक्त पंक्तियों में ज्वलित-वाडव-वन्हि' स्वभावात्मक प्रतीक है ।

घूमने का मेरा अभ्यास,
बढ़ा था मुक्त-व्योम-तल नित्य ।
कुतूहल खोज रहा था व्यस्त
हृदय सत्ता का सुन्दर सत्य ।[८३]

इस उदाहरण में `हृदयसत्ता` प्रेम का प्रतीक है जो कि स्वभावात्मक प्रतीक है ।

(३) क्रियात्मक प्रतीक :

क्रियात्मक प्रतीक में क्रिया शब्दों के अतिरिक्त अन्य दूसरे शब्द भी सम्मिलित हो सकते हैं । इस प्रकार के प्रतीकों की भी सुन्दर छटा प्रसाद जी के काव्य में मिलती है -

वल्लरियाँ नृत्य निरत थी
बिखरी सुगन्ध की लहरें,
फिर वेणु रन्ध्र से उठकर
मूर्छना कहाँ अब ठहरे ।[८४]

इस उदाहरण में `नृत्य` स्पन्दन क्रिया का द्योतक है ।

इसी प्रकार से निम्न उदाहरण में भी `हँसना` और `खिलना` क्रियात्मक प्रतीक है -

सृष्टि हँसने लगी आँखों में खिला अनुराग ;
राग रंजित चंद्रिका थी, उड़ा सुमन पराग ।[८५]

(४) मिश्र प्रतीक :

एक से अधिक प्रतीकों का मिश्रण इस वर्ग में दृष्टिगोचर होता है । कहीं आकृति और परिवेश का मिश्रण दिखायी देता है तो कहीं पर आकृति और वर्ण का और कहीं पर इन तीनों का ही मिश्रण दृष्टिगोचर होता है । प्रसाद जी के काव्य में इस प्रकार के प्रतीक भी मिलते हैं —

कितने मंगल थे मधुर गान
उसके कानों को रहे चूम ।[८६]

इस उदाहरण में `चूमना` प्रतीक है जो कि क्रियात्मक और भावात्मक प्रतीकों को अपने में समाहित किए हुए हैं। इसी प्रकार का अन्य उदाहरण भी देखिए -

और वह नारीत्व का जो मूल मधु, अनुभव,
आज जैसे हँस रहा भीतर बढ़ाता चाव।
मधुर व्रीड़ा मिश्र चिन्ता साथ ले उल्लास,
हृदय का आनन्द-कूजन लगा करने रास।[८७]

इस उपरोक्त उदाहरण में `आनन्द कूजन` प्रतीक परिवेश, क्रिया और भाव तीनों को अपने में समेटे हुए हैं। अतः यहाँ पर मिश्र प्रतीक है।

इस प्रकार से प्रतीक विधान की दृष्टि से प्रसाद जी का काव्य बहुत ही महत्वपूर्ण है। इसके द्वारा उन्होंने हृदय की भावनाओं को स्पष्ट किया है।उन्होंने अपने काव्य में जहाँ परम्परागत प्रतीकों का प्रयोग किया है वहीं दूसरी ओर कुछ नवीन प्रतीकों का भी विवेचन प्रस्तुत किया है।

--

सन्दर्भ :

१- प्रसाद : कामायनी की भूमिका, पृ० १४

२- डॉ० कुमार विमल : छायावाद का सौंदर्यशास्त्रीय अध्ययन, पृ० २११

३- डॉ० प्रेमशंकर, प्रसाद का काव्य, पृ० १८८

४- प्रसाद, आँसू, पृ० २३

५- वही : पृ० ८

६- प्रसाद : लहर, पृ० ६

७- वही, पृ० ३७

८- वही, पृ० ३६

९- प्रसाद, कामायनी, पृ० २११

१०- प्रसाद, आँसू, पृ० १६

११- वही, पृ० १६

१२- वही, पृ० १५

१३- प्रसाद : स्कन्दगुप्त, पृ० १०८

१४- प्रसाद : कामायनी, पृ० २१५

१५- प्रसाद : आँसू, पृ० १४

१६- प्रसाद : लहर, पृ० ५६

१७- प्रसाद : आँसू, पृ० ३०

१८- प्रसाद, लहर, पृ० ४०

१९- प्रसाद, कामायनी, पृ० ४६

२०- वही, पृ० ४७

२१- प्रसाद, आँसू, पृ० २१

२२- प्रसाद, कामायनी, पृ० १६६

२३- प्रसाद, कानन-कुसुम, पृ० ३६

२४- प्रसाद : आँसू, पृ० २३
२५- वही, पृ० २३
२६- प्रसाद : झरना, पृ० २६
२७- प्रसाद : विशाख, पृ० ३६
२८- प्रसाद : लहर, पृ० ११
२९- वही, पृ० २७
३०- प्रसाद : ध्रुवस्वामिनी, पृ० ४१
३१- प्रसाद : आँसू, पृ० १२
३२- लहर, प्रसाद, लहर, पृ० १८
३३- प्रसाद : स्कन्दगुप्त, पृ० ८५
३४- प्रसाद : आँसू, पृ० १७
३५- वही, पृ० १६
३६- प्रसाद, लहर, पृ० ४०
३७- प्रसाद, आँसू, पृ० २६
३८- प्रसाद : झरना, पृ० ४६
३९- प्रसाद : अजातशत्रु, पृ० १३४
४०- प्रसाद, झरना, पृ० ३७
४१- प्रसाद : स्कन्दगुप्त, पृ० १६
४२- प्रसाद : कामायनी, पृ० ८७ ६७
४३- वही, पृ० ५५
४४- वही, पृ० १४८
४५- प्रसाद, स्कन्दगुप्त, पृ० १६
४६- प्रसाद : काननकुसुम, पृ० ६३
४७- प्रसाद : कामायनी, पृ० २२
४८- डॉ० केदारनाथ सिंह : कल्पना और छायावाद, पृ० १०५
४९- प्रसाद : कामायनी, पृ० १८३

५०- प्रसाद : आँसू, पृ० १२
५१- वही, पृ० ७२
५२- प्रसाद, कामायनी, पृ० १३२
५३- प्रसाद, चित्राधार, पृ० १७१
५४- प्रसाद, कामायनी, पृ० १७०
५५- वही, पृ० १८
५६- प्रसाद, आँसू, पृ० ४१
५७- वही, पृ० २७
५८- वही, पृ० १३
५९- प्रसाद, चन्द्रगुप्त, पृ० १५५
६०- प्रसाद : कामायनी, पृ० ६०
६१- प्रसाद, आँसू, पृ० १६
६२- प्रसाद : झरना, पृ० ४९
६३- प्रसाद : आँसू, पृ० २९
६४- वही, पृ० १५
६५- वही, पृ० २२
६६- प्रसाद, झरना, पृ० ९२
६७- प्रसाद : काननकुसुम, पृ० १००
६८- प्रसाद : आँसू, पृ० १४
६९- वही, पृ० ३८
७०- वही, पृ० १९
७१- प्रसाद : लहर, पृ० ३९
७२- डॉ० नामवर सिंह: छायावाद : पृ० ९६
७३- प्रसाद : चन्द्रगुप्त, पृ० ५४

७४- प्रसाद : आँसू, पृ० २६

७५- वही, पृ० ६

७६- वही, पृ० ७

७७- वही, पृ० २८

७८- प्रसाद : कामायनी, पृ० ७१-७२

७६- वही, पृ० ६८

८०- वही, पृ० ७५

८१- वही, पृ० ५२

८२- वही, पृ० ३५

८३- वही, पृ० २३

८४- वही, पृ० २६८

८५- वही, पृ० ८६

८६- वही, पृ० १५८

८७- वही, पृ० १०२